विज्ञान में कैरियर - मेरा चुनाव

जयंत नार्लिकर

मेरे बचपन की एक घटना है। मैं तीसरी में था। कक्षा में टीचर ने पूछा - 'तुम्हारे पिता क्या करते हैं?' चूंकि हमारा स्कूल बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के कैम्पस में था इसलिए हममें से अधिकांश बच्चों के अभिभावक विश्वविद्यालय में काम करते थे। मुझे याद है मेरा जवाब था - 'प्रोफेसर'। 'किस विषय के?' टीचर का अगला सवाल था। मुझे मालूम नहीं था तो टीचर ने ही बताया - 'तुम्हारे पिता गणित के प्राध्यापक हैं।' पूरा जवाब न पता होने के मलाल की जगह तुरंत ही एक उल्लास ने ले ली। तो मेरे पिता ने भी वही विषय पढ़ा था जो मुझे सर्वाधिक प्रिय है।

यह घटना बताने का मेरा उद्देश्य इस बात को रेखांकित करना है कि गणित में मेरी रुचि मेरे पिता द्वारा थोपी गई नहीं है और ना ही अन्यों द्वारा मुझे यह कहने से पैदा हुई है कि मुझे मेरे पिता की तरह गणितज्ञ बनना चाहिए। मुझे ऐसे कई मामले पता हैं जब जानबूझकर या अनजाने में ही बच्चों पर अपने अभिभावकों की उपलब्धियों को दोहराने का दबाव डाला जाता है।

गणित और विज्ञान में मेरी रुचि को मेरे पिता ने नोटिस किया। उन्होंने ही गणित की पहेलियों, विरोधाभासों आदि जैसे मज़ेदार पहलुओं से मेरी पहचान कराई। कभी वे खुद मेरे साथ बैठकर इन पहलुओं की साझेदारी करते तो कभी इस तरह की किताबें देकर। उन्होंने मुझे और मेरे भाई को विज्ञान के प्रयोग करने को प्रेरित किया। कैम्पस का हमारा घर बहुत बड़ा था, इतना बड़ा कि उसमें मेरे और मेरे भाई के लिए एक प्रयोगशाला खोली जा सकी थी।

उस वक्त अन्य विश्वविद्यालयों से प्राध्यापकों का आना और स्थानीय मेज़बानों के यहां रहना आम बात थी। इसके चलते एन.आर. सेन, राम बिहारी, ए.सी. बैनर्जी और वैद्यनाथ स्वामी जैसे गणितज्ञों का हमारे यहां रहना होता रहता था। मैं पूरी तरह तो उनकी बातें न समझ पाता लेकिन इस परिवेश ने मुझमें गणित की एक छवि बना दी।

पनपना

मेरे जीवन में एक महत्वपूर्ण मोड़ तब आया जब मैं आठवीं में था। इसने मेरे अन्दर एक प्रतियोगी भावना जागृत कर दी। मेरे मामा मोरेश्वर हुजूरबाज़ार (मोरूमामा) गणित में स्नातकोत्तर की पढ़ाई करने हमारे यहां आए। वे बहुत ही बुद्धिमान अध्येता थे। उन्होंने मुम्बई विश्वविद्यालय से बी.एससी. की थी। (बाद के सालों में वे इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, मुम्बई में प्राध्यापक और फिर निदेशक बने)। मोरूमामा ने गणित में मेरी रुचि को पहचाना। उन्होंने यह भी देखा कि मेरे पिताजी ने दीवार पर दो ब्लैक बोर्ड बनाए थे, एक मेरे लिए और एक मेरे भाई के लिए। हम इस पर जो चाहे लिखते, बनाते। मोरूमामा ने इन बोर्ड का एक नया इस्तेमाल सोचा। वे कभी-कभी बोर्ड पर 'जे.वी.एन. के लिए एक चुनौती' लिखकर उसके नीचे गणित की कोई पहेली या सवाल लिख देते। सवाल वहां तब तक लिखा रहता जब तक मैं उसे हल न कर लेता या फिर हाथ न खड़े कर देता (वैसे ऐसा कम ही होता था)।

मोरूमामा के सवाल निश्चय ही मेरे स्कूली पाठ्यक्रम से बाहर की चीज़ होते, इनमें या तो किसी विश्लेषणात्मक तर्क या जोड़ तोड़ की ज़रूरत होती। हर सवाल से मेरा गणित के एक नए व अनछुए पक्ष से साक्षात्कार होता। मुझे अफसोस है कि इन सवालों का मैंने कोई रिकॉर्ड नहीं रखा। इस प्रक्रिया ने मुझमें एक मुश्किल सवाल के रूप में परोसी चुनौती को स्वीकार करने की प्रवृत्ति पैदा कर दी।

मैं यहां यह कहना चाहूंगा कि स्कूल में भी मुझे हौसला अफज़ाई करने वाले कुछ शिक्षक मिले। कभी-कभी मैं मोरूमामा के सवालों को स्कूल ले जाता। मेरे गणित के अध्यापक (श्री पाण्डे) इन सवालों पर चर्चा करने का समय निकालते हालांकि वे स्वयं भी इन्हें हल न कर पाते। आज